अप्रेल १९९६ हिंदी पत्रिका में प्रकाशित

अनाथपिंडिक

बुद्ध-दर्शन

– श्रेष्ठि, क्या तुमने 'बुद्ध' कहा?

– हां, अनाथपिंडिक जी, मैंने बुद्ध ही कहा।

– श्रेष्ठि, तो क्या संसार में बुद्ध उत्पन्न हुए हैं?

– हां, अनाथपिंडिक जी, संसार में बुद्ध उत्पन्न हुए हैं।

– और श्रेष्ठि, तुम यह कहते हो कि कल प्रातःकाल विशाल भिक्षु-संघ सहित बुद्ध तुम्हारे यहां भोजन पर पधारने वाले हैं?

– हां, अनाथपिंडिक जी, ऐसा ही है।

उत्तर सुन-सुन कर अनाथपिंडिक का तन और मन पुलक-रोमांच से तरंगित हुए जा रहा था। श्रावस्ती का धनकुबेर अनाथपिंडिक आश्चर्यविभोर हो प्रश्न पर प्रश्न किये जा रहा था और राजगृह का धनपति, नगरश्रेष्ठि धनपाल अपने बहनोई के प्रश्नों का उत्तर दिये जा रहा था।

अनाथपिंडिक ने अपने ब्राह्मण पुरोहितों से सुन रखा था कि संसार में बुद्ध का उत्पन्न होना अत्यंत दुर्लभ है। उनके धर्मशास्त्रों में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि किसी व्यक्ति के शरीर पर महापुरुष होने के बत्तीस लक्षण विद्यमान हों और वह गृहस्थ रहे तो महान शक्तिशाली, चक्रवर्ती सम्राट होता है परंतु यदि गृहत्यागी हो जाय तो परम ज्ञानसंपन्न, विवृत-कपाट सम्यक संबुद्ध बनता है जो कि स्वयं भवमुक्त होकर अनेकों को मुक्ति का मार्ग दिखाता है। इसके लिए उसे अगणित जन्मों तक त्याग-तपस्या की पुण्य पारमिताओं का असीम बल संचय करना पड़ता है जो कि आसान नहीं है। ऐसी घटना किसी-किसी कल्प में कभी-कभार घटती है। इसीलिए अनाथपिंडिक को विश्वास नहीं हो रहा था कि सचमुच संसार में बुद्ध उत्पन्न हुए हैं।

परंतु विश्वास कैसे न करता? राजगृह के नगरश्रेष्ठि के साथ उसका साले-बहनोई का ही नाता नहीं था, दोनों एक-दूसरे के परम मित्र भी थे। वह उससे कदापि झूठ नहीं बोल सकता।

बातचीत के दौरान उसने यह भी जान लिया कि जो सम्यक संबुद्ध हुए हैं, वे कोशलदेशीय, शाक्यवंशी राजकुमार सिद्धार्थ हैं जिन्होंने चक्रवर्ती सम्राट हो सकने के प्रबल प्रलोभन को त्याग कर घर छोड़ा और कठिन तप द्वारा बुद्धत्व प्राप्त किया है। उसने यह भी जाना कि अपने एक हजार शिष्यों सहित तीनों काश्यप बंधुओं ने इन्हें अपना आचार्य स्वीकार कर लिया है और इनके भिक्षु-संघ में सम्मिलित हो गये हैं। जो समस्त मगध, अंग और काशी में ही नहीं बल्कि अन्यत्र भी जन-पूज्य हैं, वे इनके शिष्य हो गये हैं; यह कोई साधारण बात नहीं है।

उसे यह भी जानने में देर नहीं लगी कि राजा बिंबिसार ने गृहत्यागी राजकुमार सिद्धार्थ को अपने विशाल राज्य में भागीदार बनाने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया था, परंतु असफल होने पर उनसे वचन लिया था कि बुद्धत्व प्राप्त हो जाय तो वे उसे और उसकी प्रजा को धर्म सिखाने के लिए राजगृह अवश्य पधारेंगे। इसी वचनबद्धता के कारण भगवान बुद्ध राजगृह आये हुए हैं और उनके उपदेश सुन कर स्वयं बिंबिसार ही नहीं बल्कि राजगृह के श्रेष्ठि और निगमपति सहित अनेकानेक गण्यमान्य राज्य-कर्मचारी, अधिकारी, साहिब-मुसाहिब, ब्राह्मण-पुरोहित, सेठ-साहुकार भगवान के करबद्ध, श्रद्धालु अनुयायी हो गये हैं।

एक अत्यंत व्यवहार-कुशल, अंतर्राष्ट्रीय व्यवसायपति होने के कारण और स्वयं कोशल की राजधानी श्रावस्ती का नगरश्रेष्ठि होने के कारण अनाथपिंडिक इस बात को खूब समझता था कि राजा का रुख देख कर उसे प्रसन्न रखने के लिए श्रेष्ठि तथा अन्य प्रजाजनों को वैसा ही रुख अपना लेना पड़ता है। राजा जिसे अपना धर्माचार्य मान लेता है, वे भी उसके भक्त होने का दिखावा करने लगते हैं। परंतु उसने देखा कि यहां ऐसी बात नहीं है। यह कोई दिखावा नहीं है। राजगृह का नगरश्रेष्ठि उसका अंतरंग मित्र है। दोनों में एक-दूसरे के प्रति अटूट स्नेह, विश्वास और आदर का भाव है। राजगृह का नगरश्रेष्ठि अपने व्यापार-व्यवसाय हेतु अथवा अन्य किसी पारिवारिक कारणों से जब श्रावस्ती जाता था तब अनाथपिंडिक उसकी आवभगत में, स्वागत-सत्कार में कोई कसर नहीं रखता था। इसी प्रकार जब अनाथपिंडिक राजगृह आता था तो नगरश्रेष्ठि दूर से ही उसकी अगवानी के लिए स्वयं पहुँच जाया करता था। नौकर-चाकर तथा अन्य स्वजन-परिजन हाथ बांधे उसकी सेवा में लग जाते थे। सबके लिए आकर्षण का केंद्र वही बन जाता था। परंतु इस बार ऐसा कुछ नहीं हुआ। उसके आगमन की सूचना पर नगरश्रेष्ठि न स्वयं दूर से उसका स्वागत करने आया और घर पहुँचने पर सामान्य कुशल-मंगल पूछने के अतिरिक्त न कोई अन्य बातचीत ही की; बल्कि वह अपने काम में व्यस्त हो गया, मानो उसके सिर पर कोई बहुत बड़ी जिम्मेदारी आ पड़ी हो जिसे पूरा करने में वह तन-मन से लगा हुआ हो; मानो किसी बड़े आयोजन की तैयारी के लिए नौकर-चाकरों को उचित निर्देश दे रहा हो; उनके कार्यकलापों का स्वयं निरीक्षण कर रहा हो ताकि कहीं कोई त्रुटि न रह जाय; आयोजन की सफलता में कोई कमी न रह जाय। अनाथपिंडिक इस बात को खूब जानता है कि नगरश्रेष्ठि के साथ उसके आत्मिक संबंधों में कोई कमी नहीं आयी है। अतः इस अप्रत्याशित उपेक्षा का अवश्य ही कोई अन्य बड़ा कारण होगा। उस कारण को जानने के लिए अनाथपिंडिक ने उत्सुकतावश उससे प्रश्न किया था।

– बंधुवर, क्या तुम्हारे यहां कोई आवाह-विवाह का आयोजन है जिसमें इतने मशगूल हो, अथवा कोई बृहद यज्ञ होने वाला है, अथवा कल के लिए महाराज बिंबिसार को घर पर आमंत्रित कर रखा है, जिसकी तैयारी में इतने उलझे हुए हो?

इसी प्रश्न के उत्तर में नगरश्रेष्ठि ने कहा था कि उसके यहां न किसी आवाह-विवाह का आयोजन है, न किसी बृहद यज्ञ का और न ही महाराज बिंबिसार उसके द्वारा आमंत्रित किये गये हैं; बल्कि सच्चाई यह है कि अपने सहस्राधिक भिक्षुओं सहित भगवान बुद्ध उसके यहां कल प्रातः भोजन के लिए आमंत्रित हैं। 'बुद्ध' शब्द सुनते ही वह आश्चर्यविभोर हो उठा था और एक बार नहीं; बल्कि तीन बार पूछ-पूछ कर इस सच्चाई को पुख्ता कर लिया चाहता था।

नगरश्रेष्ठि से हुई वार्त्तालाप द्वारा अनाथपिंडिक आश्वस्त हो गया कि बुद्ध सचमुच 'बुद्ध' हैं। उन्होंने झूठे प्रचार द्वारा अपने आपको बुद्ध घोषित नहीं किया है। उसका संबंधी नगरश्रेष्ठि धनपाल महाराज बिंबिसार को खुश रखने के लिए उनके आचार्य का श्रद्धालु शिष्य होने का ढोंग नहीं कर रहा है। यदि ऐसा होता तो वह अनाथपिंडिक के आदर-सत्कार की उपेक्षा करके भगवान के लिए हो रही भोजन की तैयारी में इस कदर स्वयं का दिल व्यस्त नहीं हो जाता।

गौतम बुद्ध सचमुच बुद्ध ही हैं। जो बुद्ध हैं, उनके दर्शन कल्याणकारी होते हैं। अतः उसके मन में यह धर्म-संवेग जागा कि वह तत्काल भगवान बुद्ध का दर्शन करने जाय। जब उसने अपनी यह इच्छा नगरश्रेष्ठि के सामने प्रकट की तो उसने कहा कि यह समय अनुकूल नहीं है। भगवान अपने बृहद भिक्षु-संघ के साथ नगर के भीतर नहीं; बल्कि बाहर शीतवन में विहार कर रहे हैं और दिन ढल चुका है, नगर के दरवाजे बंद हो चुके हैं। रात बीतने पर नगर के दरवाजे खुलेंगे, तभी उनसे मिलना हो सकेगा अथवा कल जब वे भोजन पर यहां पधारेंगे तब उनसे मिलना हो सकेगा। मजबूरी थी, अतः प्रातःकाल नगर-द्वार खुलते ही भगवान के दर्शनार्थ शीतवन चलना है, यह निर्णय करके अनाथपिंडिक अपने बिस्तर पर लेट गया। परंतु उसकी आंखों में नींद नहीं थी। भगवान बुद्ध के दर्शन की आकांक्षा-उत्कंठा उसके मानस में हिलोरें मार रही थी। नींद आती भी थी तो थोड़ी देर में उचक कर उठ जाता था कि भोर हो गया है। परंतु रात का गहरा अँधेरा देखकर फिर सो जाता था। यों तीन बार उचक-उचक कर जाग उठा और अँधेरा देख कर सो गया। परंतु चौथी बार उठा तो अँधेरा होने पर भी घर के बाहर अकेला ही निकल पड़ा, जैसे कोई चुंबक-शक्ति उसे अपनी ओर खींच रही हो। भगवान के दर्शन का आकर्षण बड़ा प्रबल था।

सूर्योदय में अभी देर थी। नगर-वीथियों में नगरनिगम द्वारा कुछ-कुछ दूरी पर आलोकित दीप नीरव निशीथ के अंधकार से युद्ध कर रहे थे। नगर की इन दीपशिखाओं के धीमे प्रकाश के सहारे सेठ अनाथपिंडिक नगर के दक्षिण द्वार की ओर बढ़ता जा रहा था। उसी दिशा में नगर के बाहर शीतवन था, जहां खुले में भगवान बुद्ध भिक्षु-संघ के साथ विहार कर रहे थे। सूर्योदय के पूर्व किसी भी दिशा का नगर-द्वार नहीं खुलता था, परंतु ऐसा संयोग हुआ कि अनाथपिंडिक जैसे ही दक्षिण द्वार तक पहुँचा, उसे वह खुला हुआ मिला। वह नगर-द्वार के बाहर खुले मैदान में आ पहुँचा। यहां कोई नगर-वीथि नहीं थी, न नगर-वीथि का कोई दीप-स्तंभ था। चारों ओर निविड अंधकार था। नगर का यह दक्षिण द्वार नगर के मुर्दों के निगमन के लिए था। पास ही श्मसान भूमि थी। इस विजन वनप्रदेश में अनाथपिंडिक को दिशाभ्रम हुआ। वह समझ नहीं पा रहा था कि किस ओर जाये? भगवान किस ओर विहार कर रहे हैं? चारों ओर श्मसान का सन्नाटा छाया हुआ था। अनाथपिंडिक का दिल दहल गया। उसका हृदय कांप उठा। भय के मारे रोंगटे खड़े हो गये। पसीना छूटने लगा। उसे होश आया कि अभी रात समाप्त नहीं हुई है। सूर्योदय में देर है। नगर के बाहर निकलने का यह उचित समय नहीं था। वह उल्टे पांव घर लौटने को उद्यत हुआ। इतने में मानो अपने अंतर्मन में उसे एक आवाज सुनायी दी –

"चल, गृहपति चल, चलना ही तेरे लिए श्रेयस्कर है, मंगलकारी है। लौटना नहीं।"

यह आवाज सुनी तो अनाथपिंडिक हिम्मत बटोर कर आगे की ओर बढ़ चला। थोड़ी ही देर में अंधकार का घनत्व दूर हुआ। कुछ दूरी पर, धुँधलके में उसे किसी एक व्यक्ति की अस्पष्ट-सी आकृति दिखायी दी। वे भगवान बुद्ध ही थे जो कि अपने नित्य-नियम के अनुसार प्रत्यूष के पूर्व खुली भूमि पर चंक्रमण कर रहे थे, टहलते हुए ध्यान कर रहे थे।

अनाथपिंडिक जैसे ही कुछ समीप पहुँचा, भगवान चंक्रमण भूमि से नीचे उतर कर एक बिछे हुए आसन पर बैठ गये। उन्होंने अनाथपिंडिक को आमंत्रित करते हुए पुकारा – आओ, सुदत्त।

भगवान की वाणी में निर्झरिणी का-सा कलकलनिनाद था, विद्युत का-सा चेतन प्रवाह था, अमृत का-सा मधुर मिठास था, मलयानिल की-सी स्निग्ध शीतलता थी। सुनते ही अनाथपिंडिक का सारा शरीर झनझना उठा। सचमुच भगवान 'भगवान' हैं, सम्यक संबुद्ध हैं, सर्वज्ञ हैं; इसीलिए मुझे नाम लेकर बुला रहे हैं। सुदत्त उसके माता-पिता द्वारा जन्म के समय दिया हुआ नाम था। उसका यह नाम तो लोगों ने कब का भुला दिया था। अब तो वह अनाथपिंडिक के नाम से ही प्रसिद्ध था। लोग उसे इसी नाम से जानते थे। परंतु भगवान उसके सही नाम से उसे पुकार रहे हैं। यह देख कर श्रेष्ठी भावविभोर हो उठा। उसका रोम-रोम रोमांचित हो उठा। हृदय प्रसन्न-पुलकित हो उठा। श्रद्धाबाहुल्य से उसकी आंखें डबडबा आयीं। भगवान के सम्मुख बैठ कर उसने उनकी चरण वंदना की। भगवान के दर्शनों से वह निहाल हो उठा। अनेक जन्मों का पूर्व-पुण्य प्रतिफलित हुआ। उसका भाग्य जागा। महामंगल का समय समीप आया।

(क्रमशः...)

मंगल मित्र,
स. ना. गो.